संत साहित्य की पृष्ठभूमि

डॉ० सतीश चन्द्र पाठक
प्राध्यापक, एस०एस० कॉलेज,
जहानाबाद

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में भक्ति की दो धाराएँ समानान्तर रूप से प्रवाहित हो रही थी। एक थी सगुण भक्तिधारा और दूसरी निर्गुण भक्तिधारा। सगुण के आश्रय राम और कृष्ण हैं तथा निर्गुण के अन्तर्गत संत एवं सूफियों की काव्यधारा आती है। हिन्दी साहित्य के अपने इतिहास में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने नामदेव एवं कबीर द्वारा पोषित काव्यधारा को निर्गुण ज्ञानाश्रयी धारा के नाम से अभिहित किया है। वहीं डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसे 'निर्गुण भक्तिसाहित्य' नाम दिया है जब कि डॉ० रामकुमार वर्मा ने इसे 'संतकाव्य परम्परा' नाम से अभिहित किया है। ज्ञानाश्रयी भक्तिशाखा नाम से एक भ्रान्त धारणा पनपती है कि इस काव्य परम्परा में ज्ञान की सर्वोच्च प्रामाणिकता दी गयी है। जबकि सत्य इसके विपरीत है। इसमें प्रेम को ज्ञान से अधिक महत्व देते हुए प्रेम की सर्वोच्चता की सिद्धि का प्रयास किया गया है। यही कारण है कि 'ज्ञानाश्रयीशाखा' के स्थान पर इसे संत काव्य कहा जाना अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

डॉ० परशुराम चतुर्वेदी का मत है कि "संत शब्द उस व्यक्ति की ओर संकेत करता है जिसने सत रूपी परमतत्व का अनुभव कर लिया हो और जो इस प्रकार अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठकर उसके साथ तद्रूप हो गया हो; जो सत स्वरूप नित्य सिद्ध वस्तु का साक्षात्कार कर चुका हो अथवा अपरोक्ष की उपलब्धि के फलस्वरूप अखंड सत्य में प्रतिष्ठित हो गया हो वही संत है।" डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने संत की उत्पत्ति शान्त शब्द से मानी है और इसका अर्थ निवृत्तिमार्ग या वैरागी किया है। ऐसे विचार करने से प्रतीत होता है कि संत शब्द सत शब्द से बना है जिसका अर्थ ईश्वरोन्मुख कोई भी पुरुष हो सकता है। संकुचित अर्थ में निर्गुणी पंथियों को ही संत के नाम से पुकारा जाता है। जैसे कबीर, दादू, नानक, सुन्दरदास, मलूकदास इत्यादि इसी कोटि में परिगणित किये जाते हैं।

संतकाव्य शास्त्र पुराणादि को आधार नहीं मानता वरन अपने अनुभवजन्य सत्यों को ही जीवन का परम सत्य स्वीकार करता है। सच पूछा जाए तो संत काव्य बौद्धधर्म और उसके साहित्य से अनुप्राणित है। बौद्धधर्म के वज्रयान की तांत्रिकता की प्रतिक्रिया में नाथ सम्प्रदाय का आविर्भाव हुआ जिसके प्रेरणामूलक तत्वों को ग्रहण कर संत मत का विकास हुआ। बौद्धधर्म का उदय वैदिक कर्मकांड, यज्ञादि प्रपंचों की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ था। यही कारण है कि संतकाव्य में अवतार, मूर्ति, तीर्थ, व्रत, उपवास, माला और बाह्य धार्मिक आडम्बरों का ठीक वैसा ही विरोध किया गया है जैसा बौद्धधर्म में किया गया है। साथ ही इसमें शून्य, काया, तीर्थ, सहज समाधि, योग, इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, षट्चक्र इत्यादि जैसे तत्वों को ग्रहण किया गया है। अतः कहा जा सकता है कि यह काव्य अपने मौलिक विचारों की कोटि में बौद्धधर्म की परम्परा के अन्तर्गत है। इसके साथ ही संत साहित्य पर वैष्णव मत का भी प्रभाव देखा जा सकता है स्वयं कबीर परम वैष्णव आचार्य स्वामी रामानन्द के ही शिष्य थे। तात्पर्य यह कि जहाँ कहीं भी भक्ति और ज्ञान की श्रेष्ठ बातें मिली संत काव्य में सब का समाहार हो गया है। अनेक विद्वानों ने संत काव्य को शैव मत से प्रभावित बतलाया है। आदि शंकराचार्य के अद्वैत वाद की जैसी अभिव्यक्ति इस काव्य में हुई है वह इस सत्य की साक्षी है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि तत्कालीन स्थितियां विशेषकर सामाजिक एवं धार्मिक ऐसी थी जो संतकाव्य के आविर्भाव की पृष्ठभूमि बन रही थी।